IB DIPLOMA PROGRAMME
PROGRAMME DU DIPLÔME DU BI
PROGRAMA DEL DIPLOMA DEL BI

M06/2/ABHIN/HP1/HIN/TZ0/XX/T

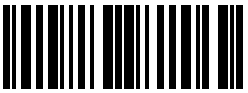

22062304

HINDI B – HIGHER LEVEL – PAPER 1
HINDI B – NIVEAU SUPÉRIEUR – ÉPREUVE 1
HINDI B – NIVEL SUPERIOR – PRUEBA 1

Monday 15 May 2006 (morning)
Lundi 15 mai 2006 (matin)
Lunes 15 de mayo de 2006 (mañana)

1 h 30 m

TEXT BOOKLET – INSTRUCTIONS TO CANDIDATES

- Do not open this booklet until instructed to do so.
- This booklet contains all of the texts required for Paper 1.
- Answer the questions in the Question and Answer Booklet provided.

LIVRET DE TEXTES – INSTRUCTIONS DESTINÉES AUX CANDIDATS

- N'ouvrez pas ce livret avant d'y être autorisé(e).
- Ce livret contient tous les textes nécessaires à l'épreuve 1.
- Répondez à toutes les questions dans le livret de questions et réponses fourni.

CUADERNO DE TEXTOS – INSTRUCCIONES PARA LOS ALUMNOS

- No abra este cuaderno hasta que se lo autoricen.
- Este cuaderno contiene todos los textos para la Prueba 1.
- Conteste todas las preguntas en el cuaderno de preguntas y respuestas.

पाठांश क: " 'वाटर' का सेट तोड़कर गलत किया"

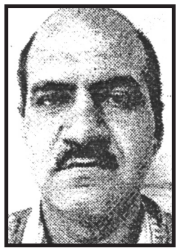

जवाहरलाल देवगन:

फ़िल्मों का सेट तोड़कर किसी प्रकार का कोई हल नहीं निकलनेवाला। फ़िल्मों की स्टोरी से मनुष्य को सीख लेनी चाहिए। रही बात 'वाटर' फ़िल्म की पटकथा की, तो इससे पूर्व भी इस तरह की अनेक फ़िल्में बन चुकी हैं, उनका विरोध किसी ने क्यों नहीं किया? 'वाटर' फ़िल्म के निर्माण को लेकर जिस तरह का विरोध हो रहा है, मेरे ख़्याल में वह बिलकुल ग़लत है। दीपा मेहता जैसी मंजी हुई निर्देशिका समाज में फैली बुराइयों का यदि खुलासा करना चाहती है तो उसमें किसी को आपत्ति क्यों है? इससे ज़ाहिर होता है कि उनकी पटकथा में जो दिखाया गया है उसमें सच्चाई है। शबाना आज़मी जैसी प्रख्यात अभिनेत्री फिल्म की शूटिंग का विरोध करनेवालों के बारे में क्या सोचती होंगी!

अभिलाषा शुक्ला:

भारतीय संस्कृति के खिलाफ 'वाटर' जैसी फिल्म बनाना कोई नई बात नहीं है। इससे पूर्व भी जाने माने निर्माता-निर्देशकों ने इससे भी अधिक संवेदनशील फिल्मों का निर्माण किया है। आजकल ऐसे बहुत निर्दशक हैं जो अश्लीलता भरी फिल्में बनाना अपना शौक समझते हैं। क्या उनकी फिल्मों का किसी ने विरोध किया जो युवावर्ग को पूरी तरह अंधकार की खाई में धकेल रही हैं?

एम.के.नागर:

जिस प्रकार से फिल्म निर्देशिका द्वारा बनाई जा रही फिल्म 'वाटर' की शूटिंग का विरोध किया जा रहा है वह बिलकुल ग़लत है। यदि फिल्म पर पाबंदी ही लगानी थी तो उस वक्त क्यों नहीं लगाई गई जब फिल्म की पटकथा को समीक्षा के लिए संबंधित विभाग के आला अफसरों के पास भेजा गया था? यदि उन लोगों को जो फिल्म की पटकथा को भारतीय संस्कृति के खिलाफ बता रहे हैं देश की सर्वाधिक चिन्ता हो तो सब से पहले उन्हें देश में निरंतर बढ़ते जा रहे भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने के लिए आगे आना चाहिए।

सुरेन्द्र सुमन:

'वाटर' फिल्म की शूटिंग का यदि विरोध करना ही था तो इस तरह का हुड़दंग नहीं करना चाहिए था। जो संगठन इस फिल्म का विरोध कर रहे हैं सर्वप्रथम इसके लिए उन्हें जिला प्रशासन से शिकायत करनी चाहिए थी। शायद विरोधियों को नहीं मालूम है कि हमारे यहाँ आदमी को अपनी बात कहने की पूर्ण स्वतंत्रता है। खैर, यह बात काफी हद तक ठीक है कि दीपा मेहता अधिकांशत: भारतीय संस्कृति के खिलाफ फिल्में बनाती है। हो सकता है कि दीपा मेहता पर पाश्चात्य सभ्यता का काफी अधिक रंग चढ़ा हुआ है।

संध्या उपाध्याय:

दीपा मेहता एक निर्देशिका है जो महिलाओं की भीतरी भावनाओं को उजागर करना चाहती है लेकिन भारतीय समाज अपनी दकियानूसी परंपरा के तहत उसको ग़लत ठहरा देता है। मेरे ख्याल से इस प्रकार की फिल्मों से भारतीय संस्कृति पर नहीं बल्कि उन लोगों पर जरूर प्रभाव पड़ेगा जो हर समय दूसरों को नुकसान, खासकर महिलाओं को उत्पीड़ित करने की सोचते रहते हैं।

पाठांश ख: “सुर-ताल - पंडित राम नारायण”

सारंगी को केवल-वाद्य बनाने के लिए जीवन खपाने वाले इस संगीतकार ने विरासत बचाने को पूरा परिवार मैदान में उतारा।

भाग १:

सारंगी पूरी तरह से एक भारतीय वाद्य है। इसमें रत्ती भर भी किसी तरह की कोई विदेशी प्रेरणा नहीं। इसका रिश्ता पिनाकी वीणा और रावणहस्त नाम के उन दो वाद्यों से है जिनका उल्लेख भारतीय पौराणिक ग्रंथों में बार-बार आया है। सारंगी हिंदुस्तान के फक्कड़ लोकगायकों की संगत हमेशा से करती आई है। धीरे-धीरे यह सामंती दरबारों और कोठों पर पहुँच गई और उसके वादकों को बतौर संगतकार रोज़ी-रोटी मिलती रही।

स्वतंत्रता के बाद सुधारवादी आंदोलनों के चलते दरबार नाम की संस्थाएँ भी परदे से ओझल होने लगीं। उस समय गायकों के साथ संगत वाद्य के रूप में उसकी जगह हारमोनियम ने ले ली तो उसका अस्तित्व और भी संकट में पड़ गया। ऐसे हालत में पंडितजी और उस्ताद बुंदू खाँ ने आगे आकर इस सुरीले वाद्य को उसका अपेक्षित स्थान दिलाने में अहम भूमिका निभाई।

भाग २:

अपने पिता से प्रारंभिक संगीत शिक्षा लेने वाले पंडितजी बताते हैं कि एक बार हरिद्वार से उनके यहाँ एक साधु आए थे जो जाते वक्त अपनी जोगिया सारंगी वहीं भूल गए। पाँच साल के राम नारायण ने तीन तारों वाली इस “खिलौने” को दोस्त बनाने का फैसला किया। पिता से सीखने के बाद वह एक बड़े उस्ताद से सीखने के लिए लाहौर गए। अपने संगीत के बारे में वे कहते हैं: “मैं एक आस्तिक व्यक्ति हूँ। अगर आप अपनी कला के प्रति गंभीर हैं और उसमें सच्ची आस्था रखते हैं तो ईश्वर आपके लिए कई रास्ते खोल देता है।

भाग ३:

पंडितजी नाम कमाने के लिए बंबई आए। वहाँ गायकों के साथ संगत के अलावा रूपहले परदे ने उनके लिए एक नया अवसर मुहैया किया। लेकिन यह दोहरी जिंदगी अंदर-ही-अंदर उन्हें मथ भी रही थी। कहते हैं: “यह प्राचीन वाद्य इससे कहीं अधिक सम्मान का हकदार था। मैंने फिल्मों में बजाने और संगत देने, दोनों से किनारा करके सारंगी को सिर्फ एकल तौर पर बजाने का फैसला किया।” यह बात थी १९६४ की। शुरू में उन्हें बेहद निराशा का सामना करना पड़ा फिर भी उन्होंने हिम्मत नहीं हारी। सारंगी को लोकप्रीय बनाने के मकसद से उन्होंने जर्मनी, पेरिस और दूसरे अन्य कई देशों की यात्रा की। विदेशी कलाकार भी उनको बहुत मानते हैं। वायलिन वादक येहुदी मेनुहिन का कहना था: “सारंगी न सिर्फ प्रामाणिक और मौलिक भारतीय वाद्य है बल्कि राम नारायण के हाथों में वह भारतीयता की मूल आत्मा को साफ तौर पर अभिव्यक्ति देती है।

पाठांश ग: "बाप-बदल"

यह हरशिंकर परसाई की लिखी हुई व्यंग्यपूर्ण कहानी है, जो परीक्षा के लिए रूपान्तरित की गई है।

श्री रामचरणजी मुख्यमंत्री थे। उनके पिताजी पंडित रविनारायण थे। पंडित रविनारायण का सौवाँ जन्मदिन होनेवाला था । पंडित रविनारायण बड़े आदमी थे। अच्छे आदमी थे। मुख्यमंत्री ने अपने पिता के सौवें जन्मदिन के अवसर पर शतवार्षिकी समारोह करने का ऐलान किया।

सारे प्रदेश में शोर था। शतवार्षिकी समारोह की तैयारियाँ बड़े जोर पर थीं। कमेटियाँ बन गई थीं जिनमें मुख्यमंत्री की पार्टी के लोग - चमचे, उप-चमचे, चापलूस, लाभ उठानेवाले, मंत्री बनने के इच्छुक, दरबारी सरकारी अफसर आदि थे। पंडित रविनारायण का जन्मदिन सोलह सितंबर को पड़ता था। हर नगर में इस दिन समारोह होना था। प्रादेशिक समिति से जिलों की इकाइयों को आदेश जा रहे थे कि महात्मा गाँधी की जयंती से शानदार समारोह होना चाहिए।

सब तैयारियाँ पूर्ण। विकट उत्साह। समारोह सोलह सितंबर को होना था। दस सितंबर को मुख्यमंत्री रामचरणजी की पार्टी में अल्पमत में आ गई। उन्हें इस्तीफा देना पड़ा। उनकी जगह पंडित शारदाप्रसाद मुख्यमंत्री हो गए।

ग्यारह सितंबर को पंडित रविनारायण शतवार्षिकी समारोह की संजोयन समिति की संकटकालीन बैठक हुई। सब सदस्य घबड़ाए हुए थे।

- अब क्या करें?
- किसी को क्या पता था कि रामचरणजी का मंत्रिमंडल ऐन मौके पर गिर जाएगा। अब शतवार्षिकी समारोह कैसे करें? क्या समारोह नहीं करने की घोषणा कर दें?
- अब समारोह कैसे रुक सकता है? तैयारी हो चुकी है।
- लेकिन अब उनके जन्मदिन का समारोह करने से फायदा ही क्या? रामचरण जी तो मुख्यमंत्री रहे नहीं।
- फायदे की नहीं, नुकसान की सोचो। नए मुख्यमंत्री रामचरण जी के घोर शत्रु हैं। वे देखेंगे कि रामचरण के पिता का जन्मदिन मना रहे हैं तो हम लोग उनकी "ब्लैक लिस्ट" में आ जाएँगे।
- बुरी आफत में फँस गए।
- पर समारोह तो रुक नहीं सकता।
- हाँ अब तो समारोह करना ही पड़ेगा।
- तो कोई रास्ता निकालो।

विचार के बाद रास्ता निकाला। समारोह तो मनाया ही जाएगा।

पर यह सूचना प्रकाशित कर दी गई:
पंडित रविनारायण का सौंवाँ जन्मदिन यथावत् मनाया जाएगा। पर जनता की जानकारी के लिए निवेदन है कि पंडित रविनारायण दस तारीख तक रामचरण के पिता थे। पर ग्यारह तारीख से वे वर्तमान मुख्यमंत्री शारदाप्रसाद जी के पिता हो गए हैं।

पाठांश घ: “अर्थपूर्ण फ़िल्मों की कठिन स्थिति”

बॉलीवुड में इन दिनों प्रयोग भी खूब हो रहे हैं और यथार्थ को दिखाने की कोशिश कर रही फ़िल्में भी खूब बन रही हैं। लेकिन तमाम नयापन या ताज़गी होने के बावजूद इन्हें दर्शक नहीं मिल पा रहे हैं।

फ़िल्म समीक्षक और गंभीर सिनेमा के चाहनेवाले इन्हें सराहते हैं इनसे जुड़े लोग कुछ दिन गर्दन उँची करके घूमते हैं लेकिन जेबें बढ़ने या आम दर्शक तक पहुँचने और तारीफ़ बटौरने का उनका सपना पूरा नहीं होता।

पहले के मुकाबले इस साल अब तक आई ऐसी फ़िल्मों की तादाद काफ़ी ज़्यादा है। इनमें ज़्यादातर फ़िल्में छोटे बजट-वाली थीं। कुछ फ़िल्मों में बड़े सितारे होने के बावजूद आम लोगों पर इन सितारों का जादू नहीं चला।

मगर ऐसी प्रयोगधर्मी फ़िल्में बन रही हैं और खूब बन रही हैं। असल में फ़िल्म निर्माण के मैदान में नई और बड़ी कंपनियों के संगठित तरीके से काम करने से बड़ा फ़र्क पड़ा है। ये कंपनियाँ अपने काम करने के पेशेवर तरीके के कारण कम बजट की फ़िल्में बना पाती हैं। फिर भी, कम देखनेवालों के कारण टिकटों की कीमत ज़्यादा है और विद्यार्थियों को कटौती भी नहीं मिलती है। लेकिन विद्यार्थियों को छोटे बजट की फ़िल्मों का असलीपन आकर्षित करता है।

कम बजट में अर्थपूर्ण फ़िल्म बनाना इन कंपनियों के मैनेजरों को खूब आता है। इसके साथ ही अंतर्राष्ट्रीय बाज़ार भी एक महत्त्वपूर्ण पहलू बन गया है। हालाँकि यह तर्क दिया जाता है कि लोगों को सिर्फ वही फ्लिम देखनी है जिसमें शुद्ध मनोरंजन है।

फ़िल्मों की आर्थिक सफलता न मिलने के बावजूद ऐसी फ़िल्मों की संख्या बढ़ रही है क्योंकि फ़िल्मकार मान रहे हैं कि हर रोज़ ऐसे गंभीर सिनेमा के दर्शक बढ़ रहे हैं। लेकिन चूँकि ऐसी फ़िल्में बहुत कम सिनेमा-घरों में चलती हैं इसलिए इनके देखनेवाले अक्सर सिनेमा-घरों तक नहीं पहुँच पाते।

ठीक भी है आखिर सृजनात्मकता पर बेवजह लगाम क्यों लगाई जाए? बाज़ार जो कहता है तो कहने दीजिए।